पोषण हेतु चमत्कारिक मोटे अनाज

डा0. आर. एस. सेंगर
प्रो0 कृषि जैव प्रौद्योगिकी विभाग
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विश्व की कुल कुपोषित आबादी का एक बड़ा भाग भारत में ही निवास करता है, जो कि निःसन्देह एक चिन्ता का विषय है। सम्भवतः यही कारण था कि राष्ट्रीय विकास की पहली आवश्यकता मानते हुए स्वास्थ्य एवं पोषण को, 15 मार्च 2017 को केन्द्रीय मन्त्रीमण्ड़लीय बैठक में नई राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति को स्वीकृति प्रदान की गई। इसके बाद मार्च 2018 को राष्ट्रीय पोषण मिशन को आरम्भ कर कुपोषण की समस्या के समाधान के लिए विभिन्न महत्वपूर्ण अभियानों का संचालन किया गया। इस मिशन के प्रमुख उद्देश्यों में बच्चों, किशोरियों एवं महिलाओं (विशेष रूप से गर्भवती महिलाओं) में कुपोषण एवं रक्ताल्पता, नवजात शिशुओं में जन्म के समय वजन में कमी तथा 6 वर्ष तक की आयु वर्ग के बच्चों में बौनेपन की समस्या को चिले स्तर पर लाना था। इस क्रम में सरकार ने पोषण, स्वास्थ्य तथा शिक्षा को वर्ष 2019–20 में जारी किये गये बजट में पर्याप्त महत्व देते हुए पोषण अभियान के लिए बजट प्रावधान को बढ़ाकर 27 हजार 584 करोड़ रूपये कर दिया गया था।

वर्तमान समय में दुनियाभर में खान–पान की आदतों के साथ शारीरिक गतिविधियों में कमी के रूझान को स्पष्ट मौर पर देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त प्रसंस्कृत खाद्य, संतृप्त वसा, शर्करा तथा नमक युक्त चटपटे आहार आरि की माँग में निरन्तर वृद्वि भी देखने को मिल रही है। इसके विपरीत फाइबरयुक्त खाद्य–पदार्थों जैसे कि फल, सब्जियाँ, साबुत अनाज/दाल आदि के सेवन में गिरावट स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। भारत जैसे देश में भी श्हरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रही जनता में इस प्रकार की प्रवृत्ति में काफी तेजी देखने को मिल रही है, जिसके परिणामस्वरूप इससे भी स्वास्थ्य एवं कुपोषण सम्बन्धी समस्याओं में वृद्वि स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

विश्व बैंक के द्वारा कराये गये एक अध्ययन के अनुसार भारत में कुपोषण के द्वारा होने वाली हानि की लागत कम से कम 10 अरब अमेरिकी डॉलर के आसपास है। इसकी वजह से उत्पादकता में कमी, रोग एवं अकाल मृत्यु आदि के रूप में देश को इसका सामना करना और देश में उपलब्ध बहुमूल्य मानव संसाधन की उत्पादकता के स्तर को बनाये रखना वर्तमान समय की प्रमुख आवश्यकता बन चुकी है। देश के ग्रामीण भागों में निवास करने वाली वृहद आबादी के बीच में कुपोषण के प्रति जागरूकता का प्रसार कार्य कराना इस समस्या के समाधान के अन्तर्गत अत्यन्त सार्थक भूमिका निभा सकता है। ग्रामीण स्तर पर ही उपलब्ध स्थानीय कृषि उत्पादों के पोषण महत्व की जानकारी को उपलब्ध कराना तथा पारिवारिक स्तर पर इनका नियमपूर्वक सेवन करना से आने वाले समय में कुपोषण की समस्या से आसानी के साथ निपटा जा सकता है। पोषण वाटिका की अवधारण भी इस क्रम में काफी उपयोगी है, जिसमें घर–आँगन में पोषकता से समृद्व सब्जियाँ तथा फल आदि को उगाकर पर्याप्त पोषणयुक्त आहार की पूरे वर्ष के लिए उपलब्धता को सुनिश्चित् किया जा सकता है।

मोटे अनाज उन फसलों को कहा जाता है जिन फसलों में अन्य अनाज की फसलों की अपेक्षा वाषेत्सर्जन की कम दर पर कार्बन का स्थिरीकरण करने की क्षमता उपलब्ध होती है। यह फसलें विभिन्न प्रकार की मृदाओं की स्थिति अर्थात क्षरीय, अम्लीय तथा रेतीली एवं जिनका पी.एच. मान 4.5 से 8.0 के मध्य होता है जो एक विस्तृत श्रृंखला के प्रति अनुकूल होती हैं। इन फसलों में विशुद्व रूप से कार्बन पदचिन्ह के स्तर को कम करने की प्रकृति होती है, इसके अतिरिक्त यह फसलें वैश्विक–तापन अर्थात ग्लोबल वार्मिंग को कम करने की क्षमता होती है तथा यह फसलें ग्लोबल वार्मिंग प्रतिरोध भी होती हैं। जैसे कि सूखे में वृद्वि की आवृत्ति तथा औसत तापमान की स्थिति में मोटे अनाजों के लिए कम अथवा बिलकुल भी उर्वरकों की आवश्यकता नही होती है। विभिन्न मोटे अनाज फसलों जैसे कि बाजरा, तथा ज्वार आदि के उत्पादन के लिए उपयोग में आने वाली भूमि के क्षेत्र में वृद्वि करना, जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों के स्तर को कम करना तथा पानी की कमी के बिन्दुओं के साथ ही खाद्य–सुरक्षा के सन्दर्भ में बनाई जाने वाली रणनीतियों के बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने में भी पर्याप्त रूप से सक्षम सिद्व हो सकती है।

मोटे अनाज की फसलें भारत, चीन तथा अफ्रीका आदि में मनुष्य के उपभोग के लिए पिछले हजारों वर्षों से ली जाने वाली प्रमुख फसलों में अपना स्थान रखती हैं। इन फसलों में उच्च पोषक तत्व (उच्च प्रोटीन सामग्री, 11 ग्राम प्रोटीन प्रति 100 ग्राम) उपलब्ध होते हैं। सम्पूर्ण विश्व में उगायी जाने वाली ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो तथा कंगनी आदि मोटे अनाज की फसलें हैं। यह समस्त फसलें 30 से.मी. से 100 से.मी. तक की ऊचाई वाली होती हैं जो सुदृढ़ जड़ प्रणालनी से युक्त होती हैं। इन फसलों में कम वाष्पोत्सर्जन के चलते नाइट्रोजन उपलब्धता की स्थिति में भी कार्बन को स्थिर करने की क्षमता उपलब होती है। इन फसलों की अच्छी उपज के लिए ईष्टतम तामान प्रतिदिन 4 से 6 घण्टे की धूप के साथ 20 से 35 डिग्री सेल्सियस होता है। इन फसलों की खेती लवणीय, क्षारीय तथा रेतीली भूमियों में भी आसानी से की जा सकती है। इस प्रकार लघु–धन्य की फसलों के लिए ईष्टतम पी0एच0 मान व्यापक रूप ईष्टतम पी0एच0 मान व्यापक रूप से 4.5 से 8.0 के मध्य होता है तथा इन फसलों को न्यूनतम पोषक तत्वों की आवश्यकता

होती है। इन फसलों को कम उपजाऊ मृदाओं (रेतीली, दोमट एवं कम अम्लीय) में भी आसानी से उगाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अधिकात्रश लघु–धन्य की फसलें अपनी सुदृढ़ रोगप्रतिरोधक क्षमता के चलते कीटों से भी मुक्त होती हैं जिसके कारण यह कीटनाशकों के उपयोग को कम करने और इनके प्रयोग के कारण होने वाले प्रदूषण को कम करने की एक सफल कूँजी साबित हो सकती है। लघु–धन्य की फसलों में अन्य अनाजों की अपेक्षा कम जीडब्ल्यूपी अर्थात ग्लोबल वार्मिंग की क्षमता होती है। उदाहरण के लिए बाजरा से 3218 कि0ग्रा0 CO_2 eq ha^{-1} तथा ज्वार से 3158 CO_2 eq ha^{-1} मोटे अनाज से कम कार्बन उत्सर्जन (लगभग 878 कि0ग्रा0 कार्बन प्रति हैक्टेयर) तथा ज्वार से 916 कि0ग्रा0 कार्बन प्रति हैक्टेयर का उत्सर्जन होता है। मोटे अनाज वाली फसलों की जड़ें गहरी होती हैं जो मृदा से अपशिष्ट नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा प्रटेशियम आदि का अवशोषण करने में सक्षम होती है। इसी कारण इस गहरी जड़ प्रणाली को अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक मात्रा में उर्वरकों की आवश्यकता नही होती है। वैश्विक मोटे अनाज उत्पादन में बाजरा (एनीसेटस ग्लीकम) का योगदान 50 प्रतिशत से भी अधिक है। पारम्परिक अनाज की फसलों की तुलना में मोटे अनाजों को अपने विकास के लिए समस्त संसाधनों की कम मात्रा में आवश्यकता होती है और अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण यह प्रतिकूल परिस्थितियों अर्थात पानी एवं उर्वरकों की स्थिति में भी पर्याप्त वृद्वि कर सकने में सक्षम होती हैं।

इसके अतिरिक्त, मोटे अनाज अपनी मजबूत जड़ प्रणाली संगठन के कारण सर्वाधिक सूखा अवरोधी फसलों के रूप में जानी जाती हैं और उनकी यही विशेषता उन्हें ऐसे क्षेत्रों में वृद्वि करने की अनुमति प्रदान करती हैं, जो कि अक्सर शुष्क मौसम के लिए पहिचाने जाते हैं। बढ़ते हुए तापमान के साथ शुष्क क्षेत्रों में मोटे अनाजों की उपज में वृद्वि दर्ज की गई है। एक सर्वे के अनुसार चरन के तीन अलग–अलग शहरों (Xifeng, Anding और Ganzhou) में तापमान के बढ़ने से मोटे अनाजों की औसत पैदावार में वार्षिक वृद्वि 30 कि0ग्रा0/हैक्टर से 121 कि0ग्रा0/हैक्टर तक दर्ज की गई है जिसके कारण बढ़ते तापमान के चलते वे मोटे अनाज की खेती का विस्तार करने की अनुशंसा करते हैं। इसके अतिरिक्त एक अन्य अधययन के माध्यम से संशोधित सीएसएम–सीईआरईएस–पर्ल मिलेट सिमुलेशन मॉडल के माध्यम से बाजारा की उपज पर तापमान परिवर्तन के प्रभाव का अनुकरण किया गया और इसके परिणामों में पाया गया कि बाजरा की उपज में सुखे के बाद 6 प्रतिशत (मिट्टी के पानी की उपलब्धता की निचली सीमा) तथा गर्मी के अनुकरण के बाद 8 प्रतिशत (तापमान को 27 से 29 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा दिया गया) वृद्वि दर्ज की गई। जलवायु परिवर्तन की स्थिति में सूखे तथा गर्मी की सहनशीलता ने संयुक्त रूप से बाजरा की उपज में 14 प्रतिशत तक की वृद्वि दर्ज की गई। इसके अतिरिक्त, मोटे अनाजों में पहाड़ी क्षेत्रों, जहाँ अन्य अनजों की खेती करना काफी कठिन है, में भी उगने की क्षमता है, जो कि दुनियाभर में सूखे के अन्तर्गत सीमित नाइट्रोजन इनपुट के साथ उच्च तापमान और पहाड़ी क्षेत्रों में भी विकसित हो सकने में सक्षम हैं।

मोटे अनाज वाली फसलों का अनुसरणः

मोटे अनाज पहले से ही ऐशिया, अफ्रीका के विभिन्न उष्णकटीबन्धीय देशों एवं कुछ हद तक दक्षिण अमेरीका में भी उगाये जाते हैं। इसलिए, स्थानीय उत्पादकों को शिक्षित कर, नीतिगत बदलावों तथा तकनीकी हस्तक्षेपों को प्रारम्भ कर इन क्षेत्रों में मोटे अनाज के उत्पादन में वृद्वि की जा सकती है। विश्व की अधिकाँश आबादी वर्तमान में उष्णकटीबन्धीय जलवायु क्षेत्रों में निवास करती है, जहाँ जलवायु परिवर्तन, फसल की उपज, उत्पादन दर, जल–विज्ञान संतुलन, तापमान तथा मृदा की गुणवत्ता आदि को स्पष्ट तौर पर प्रभावित करते हैं। इस प्रकार, सहिष्णु अनाज फसलों (जैसे–बाजरा एवं ज्वार) आदि को उगाने के लिए उपयोग की जाने वाली मृदा के क्षेत्र में वृद्वि करना जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों को कम करने, पानी की कमी के मुद्दों तथा खाद्य–सुरक्षा के लिए रणनीति बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

<u>वैश्विक जलवायु परिवर्तन के कृषि पर पड़ने वाले प्रभाव</u>

पौधों की श्वसन दर में वृद्वि करने के कारण वैश्विक तापन (ग्लोबल वार्मिंग) पौधों में कार्बन लाभ को कम कर सकती है, जिससे फसलों के उत्पादन में भी गम्भीर रूप से कमी आयेगी और इसके साथ ही खरपतवार, कीट एवं रोगजनक आदि के आक्रमण में वृद्वि भी सम्भव है। उदाहरण के तौर पर गेहूँ की खेती के दौरान वैश्विक तापमान में 1^0 सेल्सियस की वृद्वि होने से गेहूँ की पैदावार में 5 से 10 प्रतिशत तक कमी आ जाती है। विश्भर में आबादी का आकार लगतार बढ़ता ही जा रहा है जिसके फलस्वरूप प्रमुख खाद्य–फसलों के उत्पादन में आने वाली कमी के कारण खाद्य–सुरक्षा को सुनिश्चित् करने में एक बड़ी बाधा बन सकती है। अतः इस वैश्विक समस्या के समाधान के लिए हमारे वैज्ञानिक समुदाय को वैकल्पिक फसलों की खोज करन होगी।। इससे वैश्विक तापन के परिप्रेक्ष्य में एक अच्छा उत्पादन प्राप्त करते हुए खेती कार्यों के लाभ में वृद्वि की जा सकती है। इसके साथ ही इन फसलों की ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन की क्षमता भी कम करने के सार्थक प्रयास किए जाने आवश्यक है। इन फसलों को कम संसाधन–गहन होना तथा आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर होना भी आवश्यक है।

मोटे अनाज की फसलों में अन्य विभिन्न फसलों जैसे कि गेहूँ, मक्का तथा धान आदि की अपेक्षा विभिन्न वाँछनीय गुणों से युक्त होती हैं। मोटे अनाज की फसलें जलवायु के परिवर्तन के प्रति सहिष्णु तथा कम वृद्वि की अवधि

वाली अनाज की फसलें होती हैं। इन फसलों का उत्पादन, सामान्य रूप से इनकी प्रजातियों के आधार पर लगभग 60–100 दिन का होता है तथा यह सूखा सहिष्णु फसलें होती हैं। इसके अतिरिक्त यह फसलें ग्रीन हाउस की गैसों का कम उत्सर्जन करती हैं, तथा यह फसलें कृषि एवं खाद्य क्षेत्र से होने वाले वैश्विक तापन में योगदान को कम करने में प्रभावी सिद्व हो सकती हैं। इस परिदृश्य के सन्दर्भ में जब देश में जल एवं खाद्य–संकट एक विकराल समस्या का रूप ग्रहण करती जा रही है, ऐसे में मोटे अनाज खाद्य एवं पोषण के निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु एक प्रमुख आहार विकल्प बनकर उभरे हैं। प्रतिस्थापन के रूप में मोटे अनाज, मक्का तथा धान जैसी फसलों की अपेक्षा अधिक अनुकूल होती हैं। ये अल्प संसाधनों का उपभोग करती हैं अर्थात इन्हें काफी कम गुणवत्ता वाली मृदाओं तथा पानी एवं उर्वरकों की आवश्यकता होती है। फसल विविधीकरण के सन्दर्भ में भी मोटे अनाज की फसलें एक अच्छा विकल्प हैं, विशेष रूप से उन क्षेत्रों के लिए जिनमें खाद्य–असुरक्षा अधिक व्याप्त है।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन वर्तमान समय की एक गम्भीर समस्या है, जो जीवन के लगभग समस्त क्षेत्रों को प्रभावित कर रही है, ऐसे में कृषि क्षेत्र भी इससे अछूता नही है। सभी शोधकर्ता इस तथ्य पर एकमत हैं कि भारत पर जलवायु परिवर्तन का गहरा प्रभाव पड़ सकता है। विभिन्न फसलों की उत्पादन क्षमता तथा उपज इत्यादि ऐसे मुद्दे हैं, जिनके ऊपर खाद्य–सुरक्षा के सन्दर्भ में अधिक ध्यान दिया जाना आवश्यक है। विभिन्न अध्ययनों के माध्यम से ज्ञात हुआ है कि पृथ्वी भविष्य में कहीं अधिक गरम हो जायेगी। आने वाले 30 वर्षों में पृथ्वी के तापमान में लगभग 0.2 डिग्री सेल्सियस प्रति दशक की दर से वृद्वि होने की आशंका व्यक्त की जा रही है। इसके अतिरिक्त विभिन्न अनुमानों के आधार पर कहा जा रहा है कि धरती के वातावरण में विभिन्न ग्रीन हाउस गैसों जैसे कि CO_2 तथा CH_4 आदि की बढ़ती सान्द्रता के परिणामस्वरूप वर्तमान शताब्दी के अन्त तक वैश्विक तापमान में 2.5 से 4.5 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्वि होने ककी आशंका जताई जा रही है।